DELHIN/2007/20081 Date of Publication: 13/02/2023 DL(N)/202/2022-24

अध्यात्म सन्देश

मूल्य 10 रु.

वर्ष–16 अंक–09 फरवरी 2023 पृष्ठ 12 वजन 20 ग्राम

सत्संग भवन – सी॰एस॰/ओ॰सी॰एफ॰ नं॰ 6, ब्लॉक–जी, सैक्टर–11, रोहिणी, दिल्ली–85
मो॰ : 9810344596, 011–27574151
ई–मेलः atmagyanp@gmail.com
वेबसाईटः www.atmagyanprakashmandal.com

सम्पादक : **प्रेमी गजेन्द्र सिंह**
बी–99, विजय विहार, फेस–2, दिल्ली–110085

इस अंक में प्रकाशितः–

1. आत्मज्ञान से बढ़कर अन्य कोई ज्ञान नहीं है।
2. गुरू कृपा एक ऐसा वरदान है जिसे पाकर शिष्य पूर्णरूप से जाग्रत हो जाता है।
3. उपासना साधना एवं आराधना की त्रिवेणी में स्नान कर साधक निर्मल हो जाता है।
4. मानव के लिए अध्यात्मिक जीवन जीना क्यों आवश्यक है।
5. चित्त की वृत्तियाँ समुद्र में उठने वाली भयानक लहरों के समान होती हैं।
6. अलौकिक अध्यात्म साधना शिविर एवं सत्संग का आयोजन।
7. पत्रिका के विषय में प्रेमी पाठकों के विचार।

महात्मा जी द्वारा प्रकाशित ग्रन्थः

1. चेतन योग दर्शन
2. अध्यात्म दर्शन
3. आध्यात्मिक जीवन के संस्मरण
4. फिलौस्फी ऑफ पीस (अंग्रेजी में)
5. अध्यात्म प्रेम उदगार (कुमाँऊनी लोकगीत)
6. अध्यात्म ज्ञान ग्रंथ (भाग–1)
7. चेतन ज्ञान भजन माला पांच संस्करण
8. निष्काम कर्म योग दर्शन
9. रूहानी गुरू ज्ञान ग्रन्थ (भाग–1)

महात्मा जी द्वारा जारी ऑडियो एवं वीडियों कैसेट्सः

1. चेतन वाणी–1 (ऑडियो कैसेट)
2. चेतन वाणी–2 (ऑडियो कैसेट)
3. चेतन वाणी (कुमाऊँनी वीडियों कैसेट)
4. चेतन वाणी (कुमाऊँनी ऑडियों कैसेट)

संपादक की लिखित अनुमति के बिना इस पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री को उद्धृत या उसका अनुवाद करना दण्डनीय अपराध होगा। किसी भी विवाद का न्यायिक क्षेत्र दिल्ली होगा।

सत्संग कार्यक्रमः– चेतन योग आश्रम में गर्मियों में 3.00 बजे से 5.00 बजे तक तथा सर्दियों में 2.00 बजे से 4.00 बजे तक प्रत्येक रविवार को 'अध्यात्म सत्संग' होता है। जिसमें सभी श्रद्धावान सुधी पाठकगण आमंत्रित हैं सत्संग सुनकर "अध्यात्म ज्ञान" प्राप्त करें और अपने जीवन को सफल बनायें।

संस्था का वेबसाईट : www.atmagyanprakashmandal.com है

सम्पादकीय

रुहानी गुरू आनन्द के दाता, शाश्वत् दण्डवत् प्रणाम!!!

आत्म ज्ञान से बढ़कर अन्य कोई ज्ञान नहीं है।

आत्म ज्ञान वह ज्ञान है जिसे जानकर अन्य कुछ जानना शेष नहीं रहता है। इस ज्ञान से जो आन्तरिक आनन्द की प्राप्ति होती है वह संसार के किसी भी भोग पदार्थ से प्राप्त नहीं हो सकती है वास्तव में शाश्वत आनन्द किसी भी बाहरी साधन में नहीं बल्कि अपनी आत्मा में ही निहित है जिसे साधना रूपी पुरूषार्थ से प्राप्त किया जा सकता है। हम केवल आत्मा से निसृत आनन्द से ही तृप्त हो सकते हैं क्योंकि आत्मा सत्–चित् आनन्द स्वरूप परमात्मा का अंश है। आत्मा नित्य सनातन तथा पुरातन है जो नित्य और शाश्वत है वही हमें नित्य एवं शाश्वत आनन्द प्रदान कर सकता है। चूंकि आत्मा परमात्मा का अंश है इसलिए जीव को अपनी आत्मा में ही सत् चित् आनन्द की प्राप्ती हो सकती है। अब प्रश्न यह उठता है कि जब आत्मा में ही परमात्मा का वास है तो जीव को उसकी अनुभूति क्यों नहीं होती है? चेतन अमल सुख की राशि आत्मा के होते हुए भी जीव दुखी क्यों रहता है? स्वयं के भीतर नित्य मुक्त आत्मा के होते हुए भी जीव जन्म–मरण के बन्धन में क्यों बंधा रहता है? आत्मा के अजन्मा होते हुए भी जीव को मृत्यु का भय क्यों सताता रहता है? यदि आत्मा आत्मज्ञान का स्रोत है तो उसे आत्मानन्द की अनुभूति क्यों नहीं होती है? इस तरह के अनेक प्रश्न जिज्ञासु के मन में उठते रहते हैं। इन प्रश्नों के उत्तर में सन्त एवं शास्त्र बताते हैं कि जब तक जीवात्मा पर अज्ञान, माया और कर्म संस्कारों का आवरण रहता है तब तक जीव स्वयं को नित्य, मुक्त, अजन्मा आत्मा मानने के बजाय शरीर ही मानता रहता है इसलिए वह स्वयं को शरीर के सुख, दुःख, राग द्वेष व कर्म संस्कारों से आबद्ध रखता है। वह नित्य मुक्त और अजन्मा होते हुए भी शरीर की मृत्यु को ही अपनी मृत्यु मानने लगता है। वह कर्तापन की भावना से हर कर्म करता है अतः कर्मबन्धन में बंधा रहता है इसलिए उसे उस परमानन्द की प्राप्ति नहीं होती है। जब कोई जीव तत्वदर्शी सन्त की शरण में जिज्ञासु बनकर आत्म ज्ञान हेतु जाता है तब सन्त उसका सही मार्ग दर्शन कराते हैं वे उसे ज्ञान, भक्ति, जप, ध्यान आदि के द्वारा उसके अज्ञान के आवरण को हटाने का प्रयास करते हैं। इनके निरन्तर अभ्यास करने से जब आत्मा के ऊपर छाये अज्ञान का माया का आवरण हट जाता है तब जीवात्मा अपने वास्तविक स्वरूप में सदा के लिए स्थित हो जाता है। उसका देह–स्वरूप का भाव समाप्त हो जाता है उसे सभी सांसारिक भोगों व सभी कामनाओं से वैराग्य हो जाता है इस प्रकार उसकी आत्मा से परमानन्द निसृत होने लगता है उसकी आत्मा परमात्मा के प्रकाश से जगमगा उठती है।

गुरू कृपा एक ऐसा वरदान है जिसे पाकर शिष्य पूर्ण रूप से जाग्रत हो जाता है।

सद्गुरू की कृपा और महिमा अनन्त, अपार और अपरिमित है इसीलिए कहा गया है किः–

सद्गुरू की महिमा अनन्त, अनन्त किये उपकार।
लोचन अनन्त उघारिया, अनन्त दिखावन हार।।

सद्गुरू की कृपा उसी सद्शिष्य पर होती है जिसने शिष्यत्व की कठिन साधना की है। जो अपने गुरू की प्रत्येक कसौटी पर खरा उतरा हो वही गुरू की कृपा का अधिकारी होता है। "गु" का अर्थ है महामाया का मोह अन्धकार और "रू" का अर्थ है 'रूहानी प्रकाश' वास्तव में गुरू वे है जो शिष्य के अज्ञान अन्धकार को मिटाकर उसके अन्दर ज्ञान का प्रकाश करा देते हैं। गुरू केवल ज्ञान ही नहीं देते बल्कि अपनी कृपा से शिष्य को उसके पापों से भी मुक्ति प्रदान करते हैं। शिष्य के लिए गुरू की कृपा एक ऐसा वरदान है जो उसे पूर्णरूप से जाग्रत रखती है। शिष्य गुरू के प्रति जितनी कृतज्ञता व्यक्त करता है उतनी ही गुरू की कृपा को प्राप्त कर लेता है। गुरूतत्व एक सिद्धान्त है जो हमारे अन्दर पूर्ण गुणवत्ता विकसित करता है। यह तत्व किसी शरीर या आकार में स्थित नहीं है। जब हमारे अन्दर कोई इच्छा या वासना शेष नहीं रह जाती है तब हमारे अन्दर गुरूतत्व का उदय होता है। दिव्यता एवं पावनता हमारी स्वाभाविक प्रकृति होती है जब हम अपने स्वभाव में विश्राम करते हैं तब हमारे अन्दर कोई उलझन नहीं होती है परन्तु जब हमारे अन्दर कोई विकृति उत्पन्न हो जाती है तब हम जीवन में उलझन महसूस करते हैं। गुरू हमारी उन उलझनों को अपने ऊपर ले लेते हैं और हमारे अन्दर निस्वार्थ प्रेम की ज्योति जला देते हैं। हमारा क्रोध और हमारी नकारात्मक भावनाएँ हमें नीचे की ओर खींचती हैं फिर हमारा जीवन एक जटिल समस्या से भर जाता है जब हम इन भावनाओं को गुरू को समर्पित कर देते हैं तब हम एक फूल की तरह हल्के हो जाते हैं और हमारा जीवन आनन्द से भर जाता है। शिष्य गुरू से ज्ञान प्राप्त करने पर उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है जब गुरू ज्ञान के द्वारा शिष्य का रूपान्तरण करता है तब शिष्य को भी गुरू के प्रति कृतज्ञ होना ही चाहिए क्योंकि वह ऐसा क्षण होता है जब हम ज्ञान और निस्वार्थ प्रेम से एक साथ जुड़ते हैं। ज्ञान वह नहीं है जो हम पुस्तकों में पढ़ते हैं बल्कि ज्ञान तो वह है जिसका सबसे ज्यादा प्रभाव हमारी चेतना पर पड़ता है। जिसको उच्च ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा होती है वे उसकी गहराई तक जाते हैं। ज्ञान तो एक सागर की भाँति है कुछ लोग समुद्र के किनारे पर घूम कर ताजी हवा

प्राप्त करते हैं और उसी से प्रसन्न हो जाते हैं कुछ सागर की तरंगों में पैर डुबाकर शीतलता का अनुभव करते हैं परन्तु समुद्र की गहराई में उतरकर उसमें से मूंगा मोती और बहुमूल्य वस्तुओं को प्राप्त कर लेते हैं जो समुद्र के किनारों पर बैठे लोग कभी प्राप्त नहीं कर पाते हैं इसीलिए कहा गया है किः–

जिन खोजा तिन पाईया, गहरे पानी पैठ।
मैं वपुरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ।।

इस संसार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो शान्ति प्रेम और आनन्द नहीं चाहता हो परन्तु हम अज्ञान से ही इसे प्राप्त करना चाहते हैं जो असम्भव है जब तक हम गुरू से ज्ञान प्राप्त कर उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट नहीं करते हैं तब तक शान्ति और आनन्द नहीं मिल सकता है क्योंकि गुरू के प्रति हमारी कृतज्ञता जितनी दृढ़ होगी हम उतनी ही उनकी कृपा को प्राप्त कर सकेंगे। हमें निरन्तर गुरू का सुमरन करते हुए अपने अन्दर की समीक्षा करते रहना चाहिए। गुरू चेतना के प्रकाश में स्वयं की परख निरंतर करते रहना चाहिए। क्योंकि कोई भी लालसा व वासना शिष्य के विनाश के गर्त में गिरा सकती है इसलिए उसे चाहिए कि वह जीवन को तृष्णा और भौतिक सुख की चाहत से दूर रखें। यही गुरू की कृपा को प्राप्त करने का मूल मन्त्र है।

भजन

जग में गुरू समान नहीं दाता। टेक।
वस्तु अगोचर लखाई मेरे सद्गुरू भली बताई बाता।।
काल करे सो आज ही करलें, फिर ना मिले ये साथा।।(1) जग में...
काम क्रोध सब कैद करि राखे, लोभ को गुरू ने नाथा।।
सुमरन बन्दगी करो साहिब की काल नवावे माथा।।(2) जग में...
बिन सुमरन चौरासी में गिरोगे, भुगतोगे दिन राता।।
परदा खोल मिलो सतगुरू से नित्य नबाओ माथा।।(3) जग में...
कहत कबीर सुनो भाई साधो करलो संतन साथा।।
गुरू कृपा को वही नर पावे जो गुरू से जोड़े नाता।।(4)।। जग में...

उपासना साधना आराधना की त्रिवेणी में स्नान कर साधक निर्मल हो जाता है

जब साधक इस जगत को ब्रह्म की अभिव्यक्ति मानकर निष्काम भाव से कर्तव्य कर्म करने लगता है तब साधक भौतिक शरीर में रहते हुए भी विदेह अर्थात् देह से परे हो जाता है। साधक की आत्मा में परमात्मा बीज रूप में रहता है। जैसे किसी बीज में विशाल वृक्ष छिपा होता है परन्तु बीज से वृक्ष तभी प्रकट होता है जब उस बीज को उसके अनुकूल मिट्टी जल, धूप आदि उपयुक्त तत्व प्राप्त होते हैं उन तत्वों के मिलने पर ही बीज में अंकुरण होता है वह अंकुरण एक नन्हे पौधे का रूप धारण कर लेता है कुछ समय के बाद वह नन्हा पौधा ही विशाल वृक्ष के रूप में परिणत हो जाता है और उसकी डालियाँ पुष्प और फलों से लद जाती हैं उस विशाल वृक्ष की छाया में अनेक पथिक विश्राम पाते हैं उसके मधुर फलों से अनेक लोग तृप्त हो जाते हैं और उसके फूलों की खुशबु से सारा वातावरण महक उठता है। जैसे बीज को सही जलवायु मिलने पर उससे वृक्ष प्रकट हो जाता है वैसे ही जीवात्मा में बीज रूप में छिपा परमानन्द रूपी वृक्ष साधना आराधना रूपी अध्यात्मिक जलवायु प्राप्त होने पर प्रकट हो जाता है। जिस प्रकार से पौधे को विकसित होने के लिए विशिष्ट भौगोलिक जलवायु की आवश्यकता होती है किसी पौधे को गरम जलवायु किसी को शीत जलवायु तथा किसी पौधे को समशीतोष्ण जलवायु की आवश्यकता होती है उस अनुकूल जलवायु को पाकर ही पौधे सम्यक् रूप से पुष्पित और विकसित होते हैं वैसे ही आत्मा में छिपा परमानन्द अध्यात्मिक जलवायु मिलने पर ही प्रकट होता है इसी अध्यात्मिक जलवायु को उपासना, साधना और आराधना कहा जाता है। इसी को ही भक्तियोग, ज्ञान योग और कर्म योग कहा जाता है। इसी उपासना साधना और आराधना की त्रिवेणी में स्नान कर साधक निर्मल हो जाता है। उपासना के द्वारा अपने हृदय गुफा में स्थित आत्मा में निराकार ज्योति स्वरूप परमात्मा का सतत चिन्तन–मनन स्मरण एवं ध्यान करते हुए आत्मा पर छाये अज्ञान एवं माया के बादल छँट जाते हैं। जैसे धरती के अन्दर पड़े हुए बीज से अंकुरित पौधा धरती की परत को तोड़कर ऊपर बाहर निकल आता है वैसे ही आत्मा में ब्रह्म का चिन्तन–मनन करते रहने से जीवात्म को अपने वास्तविक स्वरूप "सोऽहम्" मैं वही हूँ एवं "अहं ब्रह्मास्मि" मैं ब्रह्म हूँ की अनुभूति होने लगती है। उसे ब्रह्म तथा आत्मा की एकता अनुभव में आने

लगती है। साधना के अभ्यास से साधक मन को नियन्त्रित कर कामना एवं वासना से छुटकारा पाकर नित्य–अनित्य, सत्य असत्य के विषय में विवेकी बन जाता है। साधक जीव–ब्रह्म की एकता को अनुभव करता हुआ दिव्य स्वरूप में स्थित हो जाता है इन्द्रिय संयम के माध्यम से वह स्वयं को सुरक्षित कर लेता है। आराधना के द्वारा साधक निष्काम कर्म करता हुआ कर्मों को परमात्मा की सेवा मानते हुए स्वयं को निर्लेप कर लेता है जिससे चित्त में पुनः नये कर्म संस्कार की सम्भावना को समाप्त कर देता है। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर सूर्य का प्रकाश दिखायी नहीं देता है परन्तु जैसे–जैसे बादलों का आवरण हल्का हो जाता है तो सूर्य प्रकाश धीरे–धीरे दिखायी देने लगता है जब सूर्य के ऊपर से बादलों का आवरण पूरी तरह से हट जाता है तो पूरा आकाश मण्डल सूर्य की ज्योति से जगमगा उठता है वैसे ही साधक द्वारा परमात्मा की उपासना साधना एवं आराधना करने से उसकी आत्मा पर छाये अज्ञान एवं कर्म संस्कार के बादल छँट जाते हैं और वह अपने स्वरूप में अवस्थित हो जाता है इस प्रकार उपासना उसे परमात्मा के समीप ले जाती है। साधना उसे नियन्त्रित एवं अनुशासित करती है और आराधना उसे परमात्मा को समर्पित कर देती है अतः साधक सभी प्रकार के कर्म बन्धनों से मुक्त होकर पूर्ण रूप से आनन्द में ही स्थित हो जाता है। मुक्ति और आनन्द का यह मार्ग सच्चे साधक के लिए सहज ही सुलभ है। सच्ची श्रद्धा भक्ति एवं धैर्य के साथ इस मार्ग पर चलने की आवश्यकता है।

भजन

ज्ञान चक्षु को खोल अरे तू मूर्ख मन पहचान रे।
गुप्त रूप में सबके अन्दर छुपा हुआ भगवान रे।।
झूठा जग और माया झूठी, पाँच तत्व की काया झूठी।
झूठे जग के रिश्ते नाते मत बन तू अंजान रे।। (1)
इस चोले में साधन कर ले, मानव जीवन मुक्त बनाले।
सन्त शरण में जाकर बन्दे, जान ले आत्म ज्ञान रे।। (2)
गुप्त नाम का सुमरन कर ले, ध्यान में अन्दर दर्शन करले।
जीवन के निज रूप को तू ज्ञान दर्पण में पहचान रे।। (3)
सत्संगत की महिमा सुन ले, मानव जीवन सफल बना ले।
निर्मल सन्त से ज्ञान को पाकर कर ले अमृत पान रे।। (4)

मानव के लिए अध्यात्मिक जीवन जीना क्यों आवश्यक है?

संसार के अधिकांश मनुष्यों से जब यह प्रश्न किया जाता है कि हमें यह मनुष्य जीवन क्यों मिला है? तो इसके उत्तर में उनका एक ही कथन है कि खाओं–पियों और मौज करो इसके सिवा जिन्दगी में रखा ही क्या है? उनके इस कथन के अनुसार खाना–पीना और मौज करना ही यदि मनुष्य जीवन का उद्देश्य मान लिया जाय तो फिर इस मनुष्य शरीर को देव दुर्लभ अथवा परमात्मा का अनुपम उपहार क्यों कहा गया है इससे यह बात स्पष्ट है कि यह मनुष्य जीवन खा–पीकर पेट भरने एवं क्षणिक भोगों के पीछे भागने के लिए नहीं बल्कि निश्चित ही किसी बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मिला है वास्तव में यह मनुष्य जीवन धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि पुरूषार्थ चतुष्टय के लिए मिला है। परन्तु हममें से अधिकांश लोगों का जीवन तो अर्थ और काम के पीछे दौड़ते–दौड़ते ही समाप्त हो जाता है धर्म और मोक्ष के विषय में हम सोच भी नहीं पाते हैं। इसलिए हममे से अधिकांश अपनी अनमोल जिन्दगी को नष्ट करने वाले यह कहकर अपने आपको धोखा देते रहते हैं कि यदि इस संसार की सुविधाओं एवं विषय भोगों से मिलने वाले सुखों का भोग नहीं किया तो ऐसी जिन्दगी का क्या लाभ? सच बात तो यह है कि जीवन भर भोगों को भोगने पर भी मनुष्य का मन अधाता नहीं है इस मन को कभी तृप्ति नहीं मिलती है। ऐसा इसलिए है कि रेगिस्तान में जल पाकर प्यास बुझाने की मृग तृष्णा किसी की भी नहीं बुझ पाती है। यह मृग तृष्णा चीज ही ऐसी है कि यह हमें जो चीज है ही नहीं उसी के होने का आभास कराती है यह अनित्य बताती है यह क्षणिक सुख को शाश्वत और शाश्वत को तुच्छ बताती है यही तो अज्ञान है और यही तो माया है। दरअसल अज्ञान और माया के कारण ही हमें संसार के भोगों में सुख दिखाई पड़ता है और हम भोगों और तृष्णाओं की पूर्ति के लिए जीवन भर भागते–दौड़ते रहते हैं। इसी भाग–दौड़ में जीवन की संध्या बेला आ जाती है और हमारे पास सिवाय पश्चाताप के कुछ भी शेष नहीं रह पाता है परन्तु समय निकल जाने पर पश्चाताप करने से भी कोई लाभ नहीं हो पाता है इसीलिए कहा गया है कि "अब पछताए क्या होता है जब चिडियाँ चुग गई खेत" अब जीवन को उत्कृष्ट बनाने का समय ही बीत गया क्योंकि धर्म और मोक्ष जैसे लक्ष्य को पाने का साधन हमारा यह मनुष्य शरीर ही तो था जो अब जीर्ण हो चुका है। इस जीर्णशीर्ण शरीर से साधन–भजन करना संभव नहीं हो पाता है। इस प्रकार प्रारब्ध जन्य कर्मो का फल भोगते हुए दुखी मन से व्यक्ति इस संसार से विदा हो जाता है और कर्म फलों के अनुसार व्यक्ति की आत्मा फिर से नया शरीर धारण करती है इस प्रकार जन्म–मरण के चक्र में फंसी आत्मा अपनी मुक्ति के लिए तड़फती रहती है और शाश्वत सुख की प्राप्ती के लिए शरीर रूपी वस्त्रों को तब तक बदलती रहती है जब तक आत्मा अपने परमात्मा का स्पर्श नहीं पा लेती है परन्तु भोगों में आसक्त जीवात्मा को परमात्मा का सान्निध्य कैसे प्राप्त हो इसके लिए तो भौतिकवादी दृष्टि अर्थात् खाओ–पियो और मौज

करो वाली दृष्टि के बजाय अध्यात्मिक दृष्टि ही अपनानी होगी। अध्यात्मिक जीवन अर्थात् आत्म परायण, परमात्मा परायण, त्याग एवं तपस्या का जीवन साधना एवं वैराग्य का जीवन अपनाना ही पड़ेगा। यही वह जीवन है यही वह मार्ग है जिस पर चलकर नर से नारायण तक की यात्रा पूरी करनी पड़ती है इसी प्रकार का जीवन व्यतीत करते हुए सिद्धार्थ भगवान बुद्ध हो गये नरेन्द्र विवेकानन्द बन गये मूलशंकर स्वामी दयानन्द तथा साधारण से प्रताप सिंह परमचेतनानन्द हो गये। मनुष्य एवं अन्य पशु पक्षियों आदि जीवों की जीवन यात्रा में एक मौलिक अन्तर है पशु–पक्षियों की योनि केवल भोग योनि है जबकि मनुष्य योनि एक कर्म योनि है मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है वह अपनी यात्रा को स्वयं निर्धारित कर सकता है। वह चाहे तो पशुओं की तरह निम्न भोगों में डूबकर संकीर्ण परिधि में जीता हुआ अपनी जीवन लीला समाप्त कर सकता है अथवा भोगों से विरक्त होकर अध्यात्मिक जीवन की ओर अग्रसर हो सकता है। यह सब प्रकार से मनुष्य पर निर्भर करता है कि वह किस मार्ग का वरण करे। मनुष्य यदि चाहे तो निष्काम कर्मों के द्वारा सभी प्रकार के दुख–द्वन्दों से मुक्त होकर भौतिक जीवन को भी सुखमय बनाने के साथ–साथ मोक्ष के रूप में परम आनन्द को भी प्राप्त कर सकता है। इसीलिए कहा जाता है कि मनुष स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है। इस अध्यात्मिक यात्रा पर चलने के लिए किसी तत्वदर्शी सन्त अथवा समर्थगुरू का सान्निध्य एवं मार्ग दर्शन अति आवश्यक है। उनके द्वारा बतायी गयी अध्यात्मिक यात्रा को साधक उपासना, साधना, एवं आराधना द्वारा पूरी करे। इसके लिए साधक के हृदय में अपने आराध्य के प्रति अटूट श्रद्धा, विश्वास एवं भक्ति भावना का होना अति आवश्यक है। मन की आँखों से अपने आराध्य की छवि को निहारते हुए उसके दिव्य गुणों का चिन्तन–मनन निरन्तर करता रहे। अध्यात्मिक यात्रा के अन्तिम पड़ाव पर पहुँचकर साधक अपने वास्तविक स्वरूप सत्–चित् आनन्द को प्राप्त कर लेता है इस प्रकार साधक की जीवन यात्रा सानन्द पूरी हो जाती है। अतः मनुष्य के लिए अध्यात्मिक जीवन जीना परम आवश्यक है।

भजन

मैंने मनुष्य जन्म तुझको हीरा दिया तूने विरथा गँवाया तो मैं क्या करूँ।
मूल वेदों में सब कुछ बता ही दिया, जो समझ में न आये तो मैं क्या करूँ।।
अन्न दूध आदि खाने को सब कुछ दिया, मेवा मिष्ठान भी मैंने पैदा किया।
फिर भी निर्दयी हो जीव को सताने लगा, यदि हिंसा कमावे तो मैं क्या करूँ।।
दीन–दुखियों के दिल दुखाने लगा, रात–दिन पाप में मन लगाने लगा।
तूने जैसा किया वैसा पाने लगा, आज आँसू बहावे तो मैं क्या करूँ।।
नाम मेरा तेरा पाप भी काट दे, जो तू पापों को करने से मन डाट दे।
मैं तो कहता हूँ आजा तू सन्त शरण यदि तू ही न आये तो मैं क्या करूँ।।
कोसता दोष देता रहा तू मुझे, मुझको ये ना दिया मुझको वो ना दिया।
सबसे प्यारा मनुष्य तन तूझे दिया, फिर भी मुझको न पावे तो मैं क्या करूँ।।

चित्त की वृत्तियाँ समुद्र में उठने वाली भयानक लहरों के समान होती हैं

चित्त की वृत्तियों का निरोध करना ही वास्तव में योग है इसीलिए महर्षि पतंजली लिखते हैं कि "योगश्चित्त वृत्ति निरोध" चित्त की वृत्तियाँ समुद्र में उठने वाली लहरों के अस्थिर समान होती हैं दरअसल हमारे जीवन में जो भी घटना दुख–सुख मान–अपमान हमें अनुभव होता है उसका प्रभाव दीर्घ काल तक हमारे मानस पटल पर बना रहता है। हम जो कुछ भी संसार में देखते हैं सुनते हैं और अच्छे बुरे कर्म करते हैं उनका प्रभाव सूक्ष्म रूप से हमारे चित्त में हमारे अचेतन मन में अंकित होता रहता है जैसे समुद्र में उठने वाली लहरे समुद्र के जल को स्थिर नहीं होने देती हैं वैसे ही जीवन में घटित होने वाली घटनाएँ अथवा कर्मों के संस्कार चित्त को स्थिर नहीं होने देते हैं ऐसी स्थिति में चित्त का परमात्मा में लगना उसमें स्थिर होना आसान नहीं होता है। परन्तु जब साधन निरन्तर अभ्यास के द्वारा चित्त को चारों ओर से उसी प्रकार रोक देता है जैसे कुशल सारथी घोड़ों की लगाम को खींच कर रथ को रोक देता है चित्त स्थिर होने लगता है फिर साधक उसे परमात्मा के चिन्तन–मनन तथा ध्यान में नित्य लगाता है तो चित्त में बसा संसार मिटने लगता है और चित्त संस्कार शून्य हो जाता है इस प्रकार साधक पूरी तरह ब्रह्म चिन्तन में लीन हो जाता है। दरअसल हमारे चित्त में भी समुद्र की तरह बार–बार कर्म संस्कारों की लहरें उठती रहती हैं ये कभी सुख की लहरें कभी दुख की लहरे कभी पाप की लहरे कभी पुण्य की लहरें कभी अविद्या की लहरे कभी राग–द्वेष की लहरे उठती ही रहती हैं चित्त में इन लहरों का उठना ही तो हमारे दुखों का कारण है। हम अपने वास्तविक स्वरूप को देख नहीं पाते हैं इन चित्त की वृत्तियों को शान्त करने के लिए ही हमारे सन्तों एवं शास्त्रों ने ज्ञान, भक्ति, निष्काम कर्म एवं सत्संग आदि अनेक उपाय बताये हैं जिन्हें अपना कर ही चित्त की वृत्तियों का निरोध हो सकता है। जैसे समुद्र की लहरों के शान्त हो जाने पर शरद कालीन पूर्णिमा के चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखायी देने लगता है वैसे ही चित्त को शान्त होने पर सर्वज्ञ सर्वव्यापी निराकार ब्रह्म हमारी आत्मा में स्पष्ट दिखायी देने लगता है उसकी अनुभूति होने लगती है चित्त की वृत्तियों के अस्थिर होने के कारण ही हमें अर्न्तयामी परमात्मा की अनुभूति नहीं हो पाती है।

अलौकिक अध्यात्मिक साधना शिविर एवं सत्संग का आयोजन

आत्म ज्ञान प्रकाश मण्डल रोहिणी दिल्ली–110085 संस्था द्वारा अलौकिक अध्यात्म साधना शिविर एवं सत्संग का आयोजन दिनाँक **13.01.2023** से **15.01.2023** तक "चेतन योग मोक्ष धाम" रोहिणी, सैक्टर–11, दिल्ली–85 में मुक्तात्मा श्री परमचेतनानन्द जी के निष्कामी सेवक महात्मा निर्मलानन्द जी के सान्निध्य में हुआ। जिसमें दिल्ली, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान के विभिन्न केन्द्रों से प्रेमीजन एवं महिलाएँ सम्मिलित हुए जिन्हें प्रतिदिन दो पारियों में साधना का अभ्यास कराया गया। महात्मा जी ने शिविर में सत्संग प्रवचन करते हुए आत्म ज्ञान के विषय में प्रेमियों को बताया कि आत्म ज्ञान सृष्टि का सर्वोत्तम ज्ञान है इसके बिना मनुष्य का जीवन भी पशु–पक्षी के समान है। आत्मज्ञान के द्वारा ही मानव आत्मिक आनन्द को प्राप्त कर सकता है। आत्म ज्ञान से ही मानव अपने सच्चे स्वरूप को जान सकता है। इसके बिना मानव हमेशा बन्धनों में बँधा रहता है वह आवागमन से मुक्त नहीं हो पाता है आत्म ज्ञान के बिना उसके सारे कर्म निरर्थक ही रहते हैं अतः मनुष्य को चाहिए कि वह किसी सच्चे सन्त की शरण में जाकर अवश्य ही आत्म्ज्ञान को प्राप्त कर मनुष्य जीवन को सफल बनाये। प्रेमियों ने भी सेवा, सत्संग एवं साधना के विषय में अपने विचार रखे। महिला प्रेमियों ने भी गुरू वन्दना व गुरूभक्ति के भजन सुनाये भक्तिमय वातावरण में दिनांक 16.01.23 को प्रातः साधना एवं प्रसाद वितरण के बाद शिविर का समापन हुआ।

पत्रिका के विषय में प्रेमी पाठकों के विचार

1: "अध्यात्म सन्देश" मासिक पत्रिका के माध्यम से शरीर की नश्वरता एवं आत्मा की अमरता पर विशेष प्रकाश डाला गया है। इससे शरीर का अहंकार करने वालों की आँखें खुल जाती हैं वे अपने असली स्वरूप को जानने के लिए प्रेरित होते हैं।

– भोलाराम सिसौना (मु॰ नगर)

2: "अध्यात्म सन्देश" मासिक पत्रिका अध्यात्म पर चलने वाले प्रेमियों का सच्च मार्ग दर्शन करने वाली पत्रिका है इसे पढ़कर प्रेमी अध्यात्म पथ से विचलित नहीं हो पाता है।

– निर्मला देवी, विजय विहार, दिल्ली

3: "अध्यात्म सन्देश" मासिक पत्रिका को पढ़कर ज्ञात हुआ कि अध्यात्म ही मानव जीवन का मूल आधार है अध्यात्म से ही मानव जीवन की श्रेष्ठता सिद्ध होती है।

– पंकज कुमार जेवर (गौतम बुद्ध नगर)

4: "अध्यात्म सन्देश" मासिक पत्रिका मानव मात्र को सत्य ज्ञान की जानकारी देने वाली सर्वोत्तम पत्रिका है। सत्य ज्ञान के बिना जीवन अपूर्ण है सत्य ज्ञान के बिना मनुष्य पशु के समान है।

– रामनाथ शर्मा कल्याणपुर (मेरठ)

DL(N)/202/2022-24

आत्म ज्ञान प्रकाश मंडल संस्था द्वारा एक अलौकिक अध्यात्म सत्संग का आयोजन

आत्म ज्ञान प्रकाश मण्डल रोहिणी दिल्ली संस्था द्वारा अलौकिक एवं मासिक सत्संग का आयोजन मुक्तात्मा श्री परमचेतनानन्द जी के निष्कामी सेवक महात्मा निर्मलानन्द जी के सान्निध्य में **"चेतन योग मोक्ष धाम"** रोहिणी, सैक्टर–11, दिल्ली–110085 में दिनांक 06.11.2022 को किया गया। सत्संग में अन्य प्रेमियों ने भी ज्ञान एवं भक्ति के विषय में अपने विचार व्यक्त किये भक्ति विषयक भजन भी सुनाये। आरती एवं प्रसाद वितरण के बाद सत्संग का समापन हुआ।

प्रकाशक एवं मुद्रक महात्मा निर्मलानन्द जी (संरक्षक), चेतन योग आश्रम, सी. एस./ओ.सी.एफ. नं. 6, ब्लॉक जी, सैक्टर-11, रोहिणी, दिल्ली-85 से प्रकाशित एवं प्रिंटिंग

सम्पादक : गजेन्द्र सिंह प्रेमी

मुद्रक : गैलेक्सी इन्टरप्राईसीस
ऑफिस नं॰ 3, ग्राउण्ड फ्लोर, प्लाट नं॰ 165, नियर चौपाल घर,
शिवा मार्किट, पीतम पुरा, दिल्ली–110034